ॐ

# राम संदेश

भक्ति, ज्ञान एवं कर्मयोग की आध्यात्मिक पत्रिका

वर्ष 59 जनवरी–मार्च 2013 अंक 1

रामाश्रम सत्संग, गाज़ियाबाद

# विषय-सूची

(जनवरी-मार्च 2013)


| क्रमांक | | पृष्टांक |
|---|---|---|
| 1. गुरु महिमा | *भजन* | 01 |
| 2. संक्षिप्त जीवन परिचय | *लालाजी महाराज* | 02 |
| 3. मोक्ष का जरिया धन | *डा. श्रीकृष्णलाल जी महाराज* | 07 |
| 4. असली परिवर्तन | *डा. करतार सिंह जी महाराज* | 11 |
| 5. दिव्य देन | *संस्मरण* | 15 |
| 6. श्रद्धांजली | *पूज्य माताजी* | 25 |
| 7. मकर संक्रांति पर्व पर विशेष | | 27 |
| 8. अलौकिक कृति | *जपुजी* | 29 |
| 9. संतों की होली | | 32 |
| 10.अंत मति सो गति | *प्रेरक प्रसंग* | 36 |

# राम ॐ संदेश

**संस्थापक**
ब्रह्मलीन परमसंत डा. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज
संरक्षक
ब्रह्मलीन परमसंत डा. करतार सिंह जी
सम्पादक
डा. शक्ति कुमार सक्सेना
(अध्यक्ष एवं आचार्य)

**वर्ष** 59 ✡ **त्रैमासिक पत्रिका** ✡ **जनवरी–मार्च** 2013 ✡ **अंक** 01

## गुरु महिमा

**हमारे गुरु पूरन दातार।**
**अभय दान दीनन को दीन्हें, कीन्हें भव-जल-पार॥**
**जन्म-जन्म के बन्धन काटे, यमको बंध निवार।**
**रंकहुते सो राजा कीन्हें, हरि धन दियो अपार॥**
**देवैं ज्ञान भक्ति पुनि देवैं, योग वतावनहार।**
**तन मन वचन सकल सुरवदाई, हिरदे बुधि-उजियार॥**
**सब दुरव गंजन पातक भंजन, रंजन ध्यान विचार।**
**साजन दुर्जन जो चलि आवे, एकहि दशष्टि निहार॥**
**आनन्दरूप स्वरूपमई है, लिप्त नहीं संसार।**
**चरनदास गुरु सहजो केरे, नमो नमो बारम्बार॥**

*परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज*

# जन्मजयंती पर संक्षिप्त जीवन परिचय

(रूप–स्वरूप, आचार–विचार और व्यवहार)

**छवि** :– एक सौ चालिस वर्ष पूर्व सन् 1873 की वसंत पंचमी के शुभ दिन जन्मे महात्मा रामचन्द्रजी महाराज (ऊर्फ़ लालाजी साहब, फतेहगढ़ निवासी) मझले कद के थे। उनका रंग गेहुँआ और मूर्ति मनमोहक थी। माथा चौड़ा और आँरवे चमकीली व सुन्दर थीं। बाल बहुत मुलायम थे। केवल आगे का एक दाँत और दाँतों से कुछ आगे बढ़ा हुआ था। मूँछे व दाढ़ी ररवते थे, दाढ़ी छोटी सी, घनी और सुन्दर लगती थी, आपकी भौहें सुन्दर और कमानी की शक्ल की थीं। कान बड़े न छोटे, शरीर मामूली सा, न दुबला न मोटा और हाथ पाँव बहुत कोमल थे। जज़्ब के वक्त (ईश्वर के प्रेम के आवेश में) जो आप पर अक्सर आ जाया करता था, मूँछों के बाल रवड़े हो जाते थे। लेकिन आँरव का सलूक गालिब रहता था (उनका असर आँरवो पर नहीं पड़ने पाता था)। इस वजह से जज़्ब गालिब नहीं होने पाता था। जो सेवक बरसों सेवा में रहे, उन्होंने यह कभी नहीं देरवा कि आवेश में कोई बात धर्म–शास्त्र के विरुद्ध कही हो। सिर्फ एक बार हालते जज़्ब (प्रेमावेश) में आपने कहा था कि ''सब की पूजा छोड़कर मेरी पूजा करो और इसी से उद्धार होगा।''

**वेशभूषा** :– आप जो कपड़े पहनते थे वह कम कीमत के मगर साफ होते थे। रेशमी कपड़ा इस्तेमाल नहीं करते थे। पाजामा बीच की मोरी का पहनते थे, न तंग न फैला हुआ। कुर्ता या कमीज़ भी ज्यादा नीची न होती थी। कुर्ते के ऊपर एक बास्केट पहनते थे। कभी–कभी धोती भी पहनते थे। बाहर जाने से पहले बन्द गले का कोट भी पहनते थे जो घुटनों तक नीचा होता था। किसी न किसी रंग की टोपी बड़ी बाढ़ की पहनते थे, सफ़ेद न होती थी। जाड़ो में शाल ओढ़े रहते थे। किसी प्रकार का आभूषण, यहाँ तक कि अंगूठी भी नहीं पहनते थे।

**दिनचर्या :** महात्मा जी सूरज निकलने से पहले उठते, शौच आदि से निवृत्त होकर अच्छी तरह हाथ मुँह धोते, मंजन करते और सर में कंघी करते। साफ कपड़ों को पहनकर अपना अभ्यास करते और उसके बाद लोगों को तालीम देते। दस बजे आप दफ्तर चले जाते। सायंकाल पाँच बजे आप वापस आते। जलपान के बाद बैठक में आकर बैठते और लोगों को तालीम देते। सात–आठ बजे के लगभग भोजन करते, कुछ देर टहलते और फिर तालीम के काम में लग जाते, अभ्यास करते और कराते। रात के दस बजे विश्राम करने चले जाते। पहली रात तो सोते पर एक दो बजे के करीब जाग जाते। लघुशंका के पश्चात् हाथ–पाँव धोते और फिर आँरव बंद करके लेट जाते, लेकिन सोते नहीं थे, बराबर अभ्यास करते रहते थे। अधिकतर अकेले ही सोते थे लेकिन अगर सत्संगी लोग मौजूद होते तो सबके साथ सोते।

छुट्टी के दिन गंगा जी के किनारे या बाहर टहलने जाते। बाजार से सामान रवरीदकर लाते। कभी–कभी फ़रुरवाबाद, जो फतेहगढ़ से चार–पाँच मील की दूरी पर है पैदल चले जाते और भाईओं के साथ अपने घर के पूरे सामान को रवुद ही उठाकर लाते।

**रहन–सहन–रोजी**:– महात्मा जी के माता–पिता छोटी उम्र में ही स्वर्गवासी हो गये थे। ज़मीदारी और मकान मुकदमे में काम आ गये। स्वयं वे कलक्टरी में बतौर अहलमद पेशकार के रहे और अन्त में मोहाफ़िज दफ्तर के पद से उन्होंने अवकाश पाया। वेतन थोड़ा था, एक टूटे–फूटे मकान में किराये पर रहते थे। भाई की गृहस्थी भी साथ ही रहती थी, इसलिये सदा धन संकट में ही रहे, हमेशा तंग–दस्त रहे। बाहर से आने जाने वाले सत्संगियों का तांता लगा रहता था, गुज़र मुश्किल से होती थी।

**भोजन और रवानपान**:– आप का भोजन बहुत सादा था। दोपहर के भोजन में रोटी के अलावा दाल और चटनी होती थी। सायंकाल के भोजन में तरकारी और कोई एक अचार। दोनों भोजनों के बीच के समय में रवाने की उनकी आदत न थी, यदि कोई मजबूर करता तो वे कुछ रवा

लेते थे। माँस का प्रयोग नहीं करते थे। कचौरी और अरबी का सूरवा साग उन्हें पसंद था। यदि कोई व्यक्ति रवाने के समय आ जाता तो उसे भोजन अवश्य कराते। यदि दाल कम हो जाती तो उसमें थोड़ा सा पानी और नमक मिलवा देते थे। जब सब लोग रवा चुकते तब वे स्वयं भोजन करते। चाय और बर्फ़ का सेवन वे नहीं करते थे।

**आय–व्ययः**– आमदनी से रवर्च ज्यादा होने की वज़ह से वे सदा ऋणी रहते। यहाँ तक कि कभी–कभी भूरवे रहने की नौबत तक आ जाती, लेकिन किसी को ज़ाहिर नहीं होने देते थे। रूपये की शक्ल में वे नज़राना कभी नहीं लेते थे और अगर मजबूर करने पर ले लेते तो उसे किसी गरीब को दे देते थे। रवाने–पीने की चीज़ें कबूल कर लेते थे और उन्हें जो सत्संगी वहाँ होते उनमें बाँट देते थे। रवास–रवास आदमियों से शादी वग़ैहरा के मौकों पर रूपया वग़ैहरा नज़राने के तौर पर क़बूल कर लेते।

**स्वभावः**– आप बहुत शांत और कोमल स्वभाव के थे। बहुत मीठी वाणी बोलते थे। गुस्सा बहुत कम आता था। दूसरों के दुःरव से दुःरवी और बेकल हो जाते थे और कभी–कभी रो पड़ते थे। इतने कोमल स्वभाव के होते हुए भी आप उसूल (नियम) के मामले में बहुत सख़्त थे, कोई शक्ति उन्हें अपने उसूल से नहीं हटा सकती थी। इसी विषय पर एक घटना यों हुई :– एक सत्संगी सज्जन ने एक वेश्या को अपने पास नौकर रख लिया। आपने उसको आरव कर दिया (अपने से उसका सम्बन्ध तोड़ दिया)। उसने बहुत रवुशामद की पर कोई सुनवाई नहीं हुई। जिन सेवकों पर आप बहुत मेहरबान थे और उनकी बात नहीं टालते थे उन्होंने निवेदन किया कि मुआफ़ (क्षमा) कर दिया जाये। आप कहने लगे **'तुम ऐसा न कहो। मैं उसे कभी माफ नहीं कर सकता। मुआफ़ी सिर्फ एक शर्त पर मिल सकती है, वह यह कि उस औरत से शादी कर ले या उसे कतई छोड़ दे और आगे के लिये तौबा कर ले। मैं अपनी सफेद दाढ़ी पर काला दाग नहीं लगने दूँगा।'** आप कहा करते थे– **'सब गुनाह (पाप) मुआफ किये जा सकते हैं लेकिन जिनाकारी (परस्त्री–गमन) नहीं। अगर अपना लड़का भी बदकार**

**(कुकर्मी) हो तो उसे भी छोड़ देना चाहिये।'** कहते थे– 'अगर बूढ़े हो और अकेले नहीं रह सकते तो शादी कर लो इसमें कोई हर्ज नहीं है, लेकिन गैर औरत (परस्त्री) के साथ सौहबत करने वाला मेरा नहीं हो सकता।'

आप ज्यादा बातचीत नहीं करते थे। औंरव मिलाकर बातचीत कम करते थे। जो प्रश्न किया जाता उसका उत्तर देते थे और खूब समझाते थे। बेकार बातचीत नहीं करते थे। अगर कोई बात पूछने वाले की समझ के बाहर होती तो खामोशी (मौन) अख्त्यार कर लेते थे और उस हालत को उस व्यक्ति पर गुजारते वक्त इशारा करते और समझा देते थे कि जो तुमने पूछा था वह यह हालत है। अगर कोई बहस करने लगता तो वह चुप हो जाते। कहा करते थे कि **'जब तक कोई तुम से सलाह न माँगे, अपनी तरफ से उसे कोई राय मत दो वर्ना बजाय फायदे के नुकसान होगा। हाँ, उसकी बेहतरी (भलाई) के लिये परमात्मा से दुआ करते रहो।'**

नीची दृष्टि करके चलते थे। ज़ोर से ठहाका मारकर कभी नहीं हँसते थे। हँसने के बजाय मुस्कुरा देते थे। वे दीनता की मूर्ति थे लेकिन खुशामद की बात नहीं करते थे। दिलआज़ारी (दिल दुखाना) से बहुत घृणा करते थे, यहाँ तक कि दूसरों की खुशी की ख़ातिर जो चीज़ पसन्द की न होती वह भी इस्तेमाल कर लेते थे।

ग़ैर औरत (परस्त्री) के पास बैठने के लिए आप हमेशा मना किया करते थे। आपका कहना था कि **–'इसका असर रियाज़त (अभ्यास) पर ऐसा पड़ता है जैसे नन्हे पौधे पर पाले का। मन पर कभी भरोसा मत करो, हमेशा एहतियात बरतो। जो शख़्स स्त्री का गुलाम है और धन का लालची है वह कभी भी परमार्थ नहीं कमा सकता।'**

वे कहा करते थे कि **'अपनी जरुरतों (आवश्यकताओं) को कम करो। यदि एक चीज़ मौजूद है तो दूसरी मत खरीदो। अगर एक**

**जूता मौजूद है तो दूसरा खरीदने की क्या आवश्यकता है। खूब रुपया कमाओ मगर उसे दूसरों पर खर्च करो। जरूरतमन्दों, ग़रीबों और विधवाओं की मदद करो। दिल–आज़ारी (दिल दुखाने) से हमेशा बचो।'**

**'हर्चे ख़्वाही कुन वले दिल-आज़ारी म कुन'**

अर्थात जो चाहे करो लेकिन किसी का दिल मत दुखाओ। आप कहते थे कि 'जो अनाथ बच्चों ओर विधवाओं को सताता है उसका नाश हो जाता है।'

**'चिराग़े कि बेवा ज़ने बरफ़रोज़,**
**बसे दीदा बासी कि शहरे बसोख़्त।'**

जिस चिराग को बेवा औरत ने जलाया, तूने देखा होगा कि उसने सारे शहर को जला दिया। अर्थात् विधवा की आह से बहुत जल्दी नाश होता है।

दिखावे से उन्हें बहुत परहेज़ था, साफ़ बात पसन्द करते थे चाहे वह कितनी ही कड़वी क्यों न हो। वे कहा करते थे – **'असली इखलाक (चरित्र) यह है कि जो दिल में हो वही जुबान पर हो। दिल में कुछ हो और जुबान पर कुछ और तो, यह बहुत बद–इखलाकी है।**

जेही खोजत ब्रह्मा थके, सुर नर मुनि देव।
कहे कबीर सुन साधवा, कर सतगुरु की सेव।।
गुरु को सिर पर राखिये, चलिये आज्ञा माहिं।
कहे कबीर ता दास को, तीन लोक डर नाहिं।।

*प्रवचन गुरुदेवः डा.श्रीकृष्ण लालजी महाराज*

# मोक्ष का जरिया - धन

कोई शख़्स (व्यक्ति) ईश्वर को चाहता है लेकिन तुम दुनिया को चाह रहे हो, इसलिये तुम्हें उल्टा नज़र आता है। वो जो ईश्वर को चाहने वाला है उसे समझदार लोग संत कहते हैं। यानी गुरु को या जो तुम्हारा भाई जिसको तुमने बड़ा (गुरु) माना है, अगर वह तुम्हारे रुपये को तबाह (बरबाद) करने में है तो उसको क्या फ़ायदा मिलेगा? किसी शख़्स के पास पैसा है तो गुरु कहता है कि भाई, जिस किसी को देना है उसको दो। बाकी देखो, छोड़ के मत जाना। उसको गरीबों में तक़सीम कर जाना, बाँट देना। तो या तो उसके बदले में तुम्हें ईश्वर का प्यार मिलेगा और नहीं तो जितना तुम (गरीबों को) दे गये हो उससे दस गुना तुम्हें अगले जन्म में मिलेगा। और अगर तुम ज़मीन में गाड़ कर छोड़ गये तो साँप बनोगे यहाँ आकर। इस तरह तुम दुनियाँ से नहीं निकल सकते। तो गुरु की इसमें क्या भलाई है? वो यह तो नहीं कहता कि मुझे दे दो। वो ये कहता है कि इसको गरीबों में बाँट दो। ईश्वर को दे रहे हो वापिस। ईश्वर की सेवा क्या है? ईश्वर के क्या तुम पाँव दबाओगे? जितने मुसीबतज़दा (दुख के मारे) हैं उनमें सबमें ईश्वर बसता है। उनको जो तुम खाना खिला रहे हो, वो ईश्वर को खाना खिला रहे हो। उनकी सेवा तो ईश्वर की सेवा है और उसका फल ईश्वर का प्रेम है। ईश्वर प्रेम से आपका आक़बत (परलोक) बनता है और मोक्ष मिलता है। इस तरह गुरु तुम्हें मोक्ष का तरीका बतला रहे हैं। तो उस रुपये से मोक्ष हासिल कर लो।

ये रुपया तुम्हारे किस काम का है? आप कहेंगे कि हमारे रिश्तेदार कुटुम्बी वगैरा हैं जिन्हें देना ज़रूरी है। अव्वल तो वो मना नहीं करता, तुम जितना देना चाहते हो उतना उन्हें दो। मगर रिश्तेदारों से ताल्लुक

कब तक है तुम्हारा ? तब तक है जब तक तुम्हारी आँखें खुली हैं (जीवित हो) मरने के बाद तुम्हारा उनसे कोई रिश्ता नहीं है। मरने के बाद किसी का रिश्ता कायम रहता है ? जिन्दगी तक ताल्लुक (सम्बंध) है। मरने के बाद तो एक ही रिश्ता रहता है। जैसे तुमने कर्म किये हैं वो भोगोगे या बिल्कुल पाक (पवित्र अछूते) जाते हो तो अल्लाह (भगवान) से रिश्ता है और कोई रिश्ता ही नहीं है। मरने के बाद तो यह बेटा हमारा कोई नहीं रहेगा।

**फ़ातहा देंगे न फ़ानी में भी दो रोज़ के बाद।**
**ख़्वाह मरे गोद में, ख़्वाह बुढ़ापे में जाय।।**

अर्थ – चाहे मरे हुये दो दिन ही हुए हों, कोई भी तुम्हारे लिये दुआ नहीं करेगा, चाहे शिशुपन में मृत्यु हो, चाहे वृद्धावस्था में।

मरने के बाद कौन कब तक याद करता है ? थोड़े दिनों घर वाली की याद रहती है, थोड़े दिनों माँ–बाप की याद रहती है, इसके बाद तो वही धन्धा है और वही हम हैं। सब भूल–भाल गये। कौन 'फातहा' देता है (प्रार्थना करता है) अपने बुजुर्गों के लिये ? यही दुनियाँ का हाल है। कौन अपने बाप दादा के नाम पर ख़ैरात करता है ? कोई नहीं करता। तो फिर जो चीज़ तुम्हारे हाथ में है उसको दूसरों पर क्यों छोड़ते हो। बाद में जो आप वसीयत करके जायेंगे वह भी उसे मिलेगा या नहीं मिलेगा, यह भी संदेहास्पद है।

एक बड़े भारी रईस थे हमारे यहाँ। वे वसीयत कर गये कि मेरे नौकर को पाँच सौ रुपये दे देना। तीन सौ रुपया इसका मुझ पर चाहिये है और दो सौ और दे देना इसकी शादी के लिये। देहली में मौत हुई। मैं मौजूद था डायरी में उन्होंने वसीयतनामा करके लड़के को दिया। उसने कहा – 'हाँ पिताजी! जैसा आप कहेंगे, वैसा ही होगा।' इधर वो मरे,

उधर पहला जो वार किया उनके लड़के ने वह उस नौकर पर किया। तनख्वाह भी मार ली और घर से निकाल बाहर किया। तो था भी वह वसीयत करने वाला बेवकूफ। अगर अपने हाथ से दे जाता तो उसको कौन रोकता था। वो मालिक था अपनी चीज़ का। तो बजाय उस रुपये को खुद देने के, आप लिख कर दे गये। तो ये कौन सी अकलमन्दी है। जितना जिसको करना है वह अपनी जिन्दगी में कर जाओ। क्या होगा पीछे ये कोई नहीं जानता। लोग वसीयत करते हैं पर मुबारिक रहे वो वकील लोग जो सच का झूठ और झूठ को सच कर दिखाते हैं। आप कितनी भी पाबंदी करके जायें फिर भी उसमें एक ऐसी मेख मार देंगे कि सब करा कराया बिगड़ जायेगा। तो भाई दूसरों के हाथों में क्यों छोड़कर जाते हो? जो तुम्हें करना हो वो करो। इसके लिये मना नहीं करते लेकिन इस मिट्टी (धन) को क्यों मिट्टी में मिलाकर जाते हो, क्यों नहीं ईश्वर का ईश्वर को वापिस कर देते? अपने बीबी बच्चों को देते हो, यह तुम्हारा स्वार्थ है। यह जो रिश्तेदारों को देना है यह लगाव के साथ है, इसका कोई सबाब (पुण्य) नहीं है। लड़कों को, भतीजों या बेटों को जो दे रहे हो, वह तो तुम स्वयं को दे रहे हो। जो तुम बिना कोई शर्त लगाये निस्वार्थ गरीबों को दे दोगे वह तुम ईश्वर को दोगे। ईश्वर का दिया ईश्वर को वापिस कर जाओ क्योंकि पीछे यह तुम्हारे किस काम आयेगा।

ये बात हम किसी से कहें तो कौन उसको मानने को तैयार होगा? लेकिन इसमें क्या ग़लत है? हमारी जो बात सुनते हैं और हम पर विश्वास रखते हैं हम उनसे यही कहते हैं। सरदार जी (पूज्य डा. करतार सिंह जी साहब) से हमने बारबार यही कहा है, देखना, अपनी जिन्दगी में सब निबटा जाना। हमने अपनी जिन्दगी में जितना हमसे हो सका, रुपया या जायदाद, सब खत्म कर दी। ये मुसीबत कि मरते वक्त यह

ख़्याल आये कि हाय! हमने यह नहीं किया, वो नहीं किया, इससे मरने से पहले ही क्यों न कर दें। हाँ, आप अपने गुजारे के लिये रख लें। लड़कों तक के लिये सरदर्द न बने। इतना रख लो अपने पास कि आरिव़री वक्त तक तुम्हारे लिये काफी हो जाये। बाक़ी जाके ईश्वर को वापिस कर दो – यानी ज़रूरतमंद ग़रीबों को दे दो।

अगर किसी को इसके बदले का ख़्याल है तो अगले जन्म में दस गुना मिलेगा। यह तो तुमने उसके (ईश्वर) बैंक में जमा कर दिये और अगर तुमने ईश्वर की सेवा के ख़्याल से दिया है तो ईश्वर का प्रेम मिलेगा। और इस प्रेम के बदले में आख़िर में मोक्ष मिल सकता है। यही (धन) तुम्हारे बंधन का बायस (निमित्त) है और वही तुम्हारी मोक्ष का बायस है। तो गुरु तो यह कहता है कि अपने पैसे से सौदा करो मोक्ष का। अगर धरती पर छोड़कर जाओगे तो बेकार। रिश्तेदारों को देकर जाओगे तो आज तक तो हमने यही देखा है कि जिसको दिया उसने फ़ज़ीते ही किये। बाद में यही कहते हैं कि देखो साहब, उसको तो इतना दे गये, हमें कुछ नहीं दिया। सब रुपया पैसा देकर तुम तो अपनी तरफ़ से उनकी मदद और रिव़दमत करते हो, फिर भी सब बेकार। इसलिये जितना ज़रूरी हो उतना दो बाकी अल्लाह का अल्लाह को वापिस कर दो। यह धन दौलत भी मख़फ़रत (मोक्ष) का ज़रिया बन सकता है।

न सुनो ग़र बुरा कहे कोई।
न कहो ग़र बुरा करे कोई।
रोक लो ग़र ग़लत करे कोई।
बक्श दो ग़र रव़ता करे कोई।

*प्रवचन परमसंत डा.करतार सिंह जी साहब*

# असली परिवर्तन

असली परिवर्तन भीतर से ही होता है, बाहरी चौकीदारी थोड़ी देर ही काम करती है। जब हमारा मन पूरी तरह से बदलेगा तब ही हम बदल सकते हैं, बाह्य परिवर्तन तो थोथा है, भ्रामक है।

इंसान संस्कारों का एक जीता जागता नमूना है। जो भी हमने कर्म किये हैं, जो भी उनकी छाप हमारे साथ है, हमारे संस्कार उन्हीं के अनुसार बने हुये हैं और उन्हीं के कारण इस संसार में सुरव–दुरव भोगते हैं। यही जन्म मृत्यु का कारण बनते हैं। बिना उनसे छूटे मुक्ति नहीं होती। अब सवाल यह है कि उसमें परिवर्तन हो तो कैसे ? बनाने वाली शक्ति तो अन्तर में है – अतः बाहर में बनने बनाने से थोड़ा फर्क तो पड़ सकता है, लेकिन उसमें स्थिरता नहीं आ सकती।

इस वास्ते सत्संग में अन्तर की कार्यवाही करने को कहा गया है। इसके लिये आवश्यक यह है कि अन्तर को धीरे–धीरे निर्मल कर, उसके प्रवाह को पलट दें। सुरत का उलट धार होना भी यही होता है, वो बजाय बाहर की ओर बहने के अन्तर में अपने केन्द्र की ओर बहने लगती है। ऐसा बदलना ही असली बदलना होता है, हृदय ही बदल जायेगा। जो संस्कार थोड़े बहुत बचते हैं वो भी गुरु कृपा से कटने लगेंगे। जब ऐसा हो जायेगा तब असली परिवर्तन आयेगा। ये परिवर्तन अगर कई जन्मों में भी आ जाता है तो बड़ी भारी बात है। बाहर की सावधानी से आया परिवर्तन दिरवावटी भी हो सकता है, लेकिन अगर अभ्यास करते–करते संस्कार कटने में एक पूरा जन्म भी लग जाये तो समझना चाहिए कि बड़ी कृपा है। पूरे संस्कार न भी कटें और नए संस्कार नहीं बने एवं पुराने

धीरे–धीरे क्षय होते जायें, तब भी बहुत है। करना यह है कि पुराने संस्कारों का जो भण्डार है उसमें आग लगानी है, उन्हें नष्ट करना है और नए संस्कारों को बनने से रोकना है।

अब आग लगाना इन्सान के तो बस का है नहीं, क्योंकि वो खुद इनमें इस क़दर फँसा है कि उसका बस नहीं चलता। वरना अगर इन्सान का बस चल जाता तो वो अपने आप ठीक हो जाता एवं कोशिश करके आज़ाद हो जाता। स्वयं का बस न चलने का कारण यह है कि हमारे ऊपर जन्म–जन्मांतर से संस्कारों का आवरण चढ़े होने के कारण बुद्धि काम ही नहीं करती। उन आवरणों को हटाने के लिये संतमत में सत्य पुरुष सतगुरु (सत्नाम) ईश्वर का वो नाम जिससे उसकी नज़दीकी हासिल हो, का सहारा लेते हैं, ताकि सतगुरु की कृपा से वही सुरत की धार जो उन आवरणों में फैल गयी है, प्रसारित हो गई है, वापस रिवंचकर अपने केन्द्र की ओर आ जाये। तब धीरे–धीरे बग़ैर प्रयास के आवरण झीने होते जायेंगे। जैसे बिजली का तार है जब तक उसमें बिजली है वो शक्तिशाली रहता है, अन्यथा बेकार। ऐसे ही ये संस्कारों के आवरण जब तक शक्तिशाली एवं विद्यमान रहते हैं तब तक सुरत की धार की बैठक उन पर रहती है। सुरत की धार जिस आवरण पर आकर ठहरती है उसे शक्ति देती है, अतः वो आवरण वैसा का वैसा ही बना रहता है, उस पर और मसाला चढ़ता रहता है। लेकिन अगर सुरत अन्तरमुरवी हो जाये तो फिर मन के संस्कारों को प्रकाशित करने की शक्ति नहीं मिलती। शुरु में काफ़ी मुश्किल पड़ती है। संस्कारों का जो जाल है वो अन्तर में छाया हुआ है, इसकी दीवार को खत्म करने के वास्ते अभ्यास करना चाहिये। थोड़ा अभ्यास में गहराई तक पहुँच जायें इसलिये सत्संग होता है। भले ही आगे न बढ़े लेकिन जहाँ है वहाँ स्थिरता बनी रहे, नीचे न गिरे। इस वास्ते पहले पहल संतमत में गुरु के द्वारा बताया हुआ साधन का अभ्यास करते हैं।

अतः जहाँ तक बने सुमिरन, भजन और ध्यान अवश्य करना चाहिए। जिस रूप में ध्यान आ जाए वो अच्छा है, अगर शब्द नहीं आता तो प्रकाश का ध्यान करें। ये भी नहीं होता, गुरु का ध्यान भी नहीं होता तो उसके द्वारा बताए शब्द (नाम) का उच्चारण ही करें, दिल से नहीं होता तो मुख से ही करें। ये भी न हो सके तो समय मिलने पर थोड़ा बहुत स्वध्याय ही करें। दो एक भजन ही पढ़ लिए, कुछ प्रवचन ही पढ़ कर उन पर मनन किया करें। फायदा अवश्य होगा।

सत्गुरु तो ईश्वर का रूप है, दया एवं कृपा के असीम भण्डार हैं। कृपा अवश्य करेंगे, लेकिन उनके प्रति प्रेम, श्रद्धा, विश्वास तो हो। उनका तो सबसे रिश्ता ही प्रेम का है। परम पूज्य गुरुदेव सन्त शिरोमणी महात्मा श्रीकृष्णलाल जी साहब भी यही फरमाते थे– ***"एक प्रेम के नाते को छोड़कर मैं और किसी नाते को नहीं जानता। केवल प्रेम और वो भी निस्वार्थ प्रेम। जो लोग बिना अपने स्वार्थ के मुझे प्रेम करते हैं, चाहे वे सज्जन हैं या दुष्ट मैं उन्हें प्रेम करता हूँ। वे मेरे हैं, मैं उनका हूँ। वे सदैव मुझ पर आश्रित रह सकते हैं, और वे देखेंगे कि मैं सदैव उनकी सेवा के लिए प्रस्तुत हूँ।"***

कितनी आत्मीयता एवं प्यार भरा पड़ा है उपरोक्त शब्दों में, ऐसे ही किसी महापुरुष जिसमें ईश्वर के सब गुण सत् चित् आनन्द मौजूद हों, की सेवा करके कैसे भी उन से आत्मिक प्रसादी ग्रहण करनी चाहिए। उनका सत्संग करना चाहिए, ताकि हमारी सुरत अन्तरमुखी हो जाए। ये ही प्रयास करना है, ये ही तरीका है सुरत पलटने का, इसी से इन्सान पलट सकता है। इसके वास्ते संतमत में सुरत के ही अभ्यास के तरीके रखे गये हैं, बल्कि यहाँ तक कहा गया है कि परमार्थ की कार्यवाही केवल वो कार्यवाही है जिसमें सुरत का उल्टाव हो। सुरत शब्द के अभ्यास को छोड़कर और अन्य जो भी कार्यवाही है, संतमत के ख़्याल से वो सब

दुनियाँ की कार्यवाही है। यहाँ तक कि सत्कर्म भी परमार्थ की कार्यवाही में शामिल नहीं है। वो बात और है कि स्वभाव ही अगर सत् का बन जाये, बाकी वो समस्त कार्यवाही जो फल की इच्छा से की जाये, चाहे वो सत् की ही क्यों न हो स्वार्थ में ही शामिल की जायेगी।

अतः सतगुरु से आने वाली कृपा की धार (फ़ैज) अन्तर में ग्रहण करनी चाहिए। ये ही काम गुरुजन करते हैं कि अपनी स्वयं की तवज़्ज़ोह शिष्य की तवज्जोह में मिला देते हैं, तो जहाँ तक उनकी पहुँच होती है वहाँ तक का फायदा शिष्य को मिलता है। अर्थात् सारा काम तवज़्ज़ोह का है। सत्संग में गुरुजन की ये कोशिश रहती है कि किसी तरह शिष्य की सुरत अंग बरामद हो जाये और उसकी ऊपर के लोकों में चढ़ाई हो।

अतः जितना हो सके सत्गुरु की दया एवं प्रेम के सहारे अपनी सुरत को ऊपर की ओर ले जाना चाहिए। पलटाव अपने आप होने लगेगा। आवश्यकता है, अन्तरमुरवी होने की।

असली परिवर्तन – अन्तर का परिवर्तन आत्म परिवर्तन।

असली प्राप्ति – आन्तरिक गुणों की प्राप्ति।

असली आनन्द – अन्तर का आनन्द जिसके पाने पर अन्य किसी आनन्द की ख्वाहिश न रहे।

**मालिक तेरी रज़ा रहे और तू ही तू रहे।**
**मुझको तेरी तलब व तेरी आरज़ू रहे।।**

*संस्मरण*

# दिव्य देन

परम गुरु डूबत गहि बाँह.....

संतों की महिमा अद्‌भुत है। उनकी दया, कृपा वृष्टि, प्यार का वर्णन नहीं हो सकता। उनके चमत्कारों को जानना और समझना तो मानव बुद्धि से परे की बात है। रोग–शोक हो या दरिद्रता, सांसारिक उलझनें या कोई भूल–चूक, उनकी क्षमा, दया और प्यार का अनुभव वह पीड़ित ही जानता है, जिसे याद करके बार–बार आँखों के आँसू नहीं थमते। मन करता है कि इस दिव्य अनुभूति को बार–बार याद कर उसकी कृपा की सुगन्ध को सभी दिशाओं में फैला दें। यद्धपि, शब्दों में अभिव्यक्त करना कठिन है फिर भी कुछ भाई बहनों ने अपने अनुभव प्रकट किये हैं जिन्हें इस पावन संस्मरण के स्तंभ में आपके सम्मुख प्रस्तुत करने की चेष्टा की जा रही है।

–संपादक

## नेत्र दान की कृपा

यह घटना 1990 या 91 की है। भभुआ में भण्डारे का अवसर था जिसका आयोजन सरदार वल्लभभाई पटेल कालेज, में किया गया था। भण्डारे से पहले गुरुदेव की इच्छा थी कि यह सर्दी का मौसम है और इस मौसम में गरीब तबके के लोगों में कंबल बांटने का प्रबंध किया जाये और इसके साथ ही एक आँखो का कैंप लगाया जाये जिसमें मोतियाबिंद के आपरेशन की व्यवस्था हो। मुगलसराय के प्रसिद्ध आँखों के विषेशज्ञ डा. कमला सिंह जो कि राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित हैं ने रामाश्रम सत्संग द्वारा आयोजित आँखों के कैंप में मरीजों का निःशुल्क

इलाज किया। करीब 25 से 30 व्यकितयों की जाँच के बाद आंखों का आपरेशन कर इलाज किया गया।

गुरुदेव के आदेशानुसार रवादी भण्डार से लगभग 200 गरम चादरें (कम्बल) मंगवाई गई थीं। सत्संग के पश्चात्त गुरुदेव ने अपने करकमलों द्वारा वहाँ पर बुलाए गये लोगों में कम्बल बांटनें शुरु किये। तभी वहाँ कुछ बच्चे भी आ गये। गुरुदेव ने मेरी तरफ देरवा, मैंने गुरुदेव का भाव समझते हुए निवेदन किया कि उन बच्चों को भी चादर दिया जाय। गुरुदेव बड़े ही प्रसन्न हुए और बच्चों को बहुत प्यार से चादर उढ़ाकर उनके गाल थपथपाये। कम्बल बाटनें के पश्चात गुरुदेव बहुत ही नम्र भाव से हाथ जोड़ कर उन सब के सामने खड़े हो गये और बोले ''और कोई सेवाकृ'' तभी वे सब के सब 200 लोग एक साथ खड़े हो गये और अपने दोनों हाथ आसमान की तरफ उठा कर जोर से बोले ''गुरु नारायण की जय''। बड़ा ही अदभुत नज़ारा था, जो भाई लोग वहाँ मौजूद थे उनको अवश्य याद होगा।

इसके बाद मुफ्त दवाईयाँ और चश्मे बाँटे गये। पूज्य गुरुदेव जब मरीज़ों को चश्में बाँट रहे थे, तभी वहां एक मरीज ऐसा भी आया था जिसकी आँरवें आपरेशन के बाद पूरी तरह परहेज़ न करने के कारण रवराब हो गई थी और बहुत दवा एवं प्रयास के बाद भी कुछ सुधार न हो सका था। जब उसकी बारी आई तो मैंने धीरे से गुरुदेव को अंग्रेजी में कहा कि डाक्टर साहब के अनुसार उसकी आँरवे हमेशा के लिये रवराब हो चुकी हैं, केवल सन्तोष दिलाने के लिये उसे चश्मा देना है। गुरुदेव ने मुझको एक अजीब से अंदाज़ से देरवा, और मेरे हाथों से चश्मा लेकर वे कुछ समय के लिए मौन हो गए। फिर वह चश्मा उस बूढ़े व्यकित को पहनाते हुये बोले ''बाबा आप को क्या दिरवाई दे रहा है'' ? वह व्यक्ति बहुत ही प्रसन्न होकर बोला ''बाबूजी आपकी पगड़ी और दाढ़ी दिरवाई दे रही है''। यह सुनकर मैं स्तब्ध रह गया। कैसा अदभुत चमत्कार था कि कुछ देर पहले तक जो व्यक्ति कुछ भी देरव पाने में असमर्थ था वही

गुरुदेव के हाथों से चश्मा पहनते ही सब कुछ देरव पा रहा था। मैं गुरुदेव के पैरों पर गिर पड़ा और रोकर उनसे अपनी गलती की माफी मांगी। गुरुदेव मुस्कुराये और हाथ ऊपर उठाकर बोले ''यह तो उसकी कृपा है''।

## बॉह गहे की लाज

ऐसी ही एक और घटना याद आती है जब गुरुदेव की असीम कृपा व अदभुत शक्ति का साक्षात अनुभव हुआ।

चकिया में बसंत का भण्डारा होना तय हुआ था। भण्डारे का इंतजाम नव निर्मित डिग्री कालेज में किया गया था। सब कुछ होते हुए भी एक बहुत बड़ी समस्या पानी के इंतज़ाम को ले कर थी। कठिनाई यह थी कि वहाँ पानी की उपलब्धता बिलकुल नहीं थी। ज़मीन पथरीली होने के कारण पानी की बोरिंग नहीं थी। लेकिन लगभग 200–300 गज पर चकिया के प्रधान जी का एक कुआँ था जिससे पानी की व्यवस्था हो सकती थी। हम लोग प्रधान जी से इस बारे में बात करने गये और उनसे भण्डारे के बारे में विस्तार से बताया तथा आग्रह किया गया कि यदि वे कुँए से मशीन द्वारा पानी निकालने की इजाज़त दे दें तो हमारी समस्या शायद हल हो सके। प्रधान जी ने हमारी प्रार्थना को बहुत ही ध्यान से सुना और आयोजन की गम्भीरता को देखते हुए राज़ी हो गए। लेकिन प्रधान जी ने बताया कि कुएँ से एक बार में डेढ़ से दो घंटे तक ही पानी निकाला जा सकता है, इस से ज्यादा देर तक पानी निकालना संभव नहीं है, क्योंकि उसके बाद वह कुआँ सूरव जाता है। फिर कुएँ को भरने में लगभग 6 से 8 घंटे का समय लगता है और उसके बाद ही पानी निकाल पाना संभव है। हम लोग उनकी बात सुन कर कुछ संतुष्ट हुए और फिर उनकी इजाज़त देने पर वहां से पाईप जोड़ कर कालेज तक पहुँचाया गया। उधर स्कूल में पानी के भंडारण के लिए दो बड़े–बड़े टैंक भी बनाये गये क्योंकि लगभग 400 से 500 आदमियों

के लिये पानी की व्यवस्था करनी थी। पानी का इंतज़ाम होने के बाद भी मन बहुत घबरा रहा था कि पता नहीं इतने से पानी से आखिर कैसे पूरा पड़ेगा ? सभी भाई लोग अपने अपने तरह से कोई न कोई उपाय करने में जुटे हुए थे, लेकिन मन ही मन परेशान अवश्य थे।

नियत दिन और समय पर परम आराध्य गुरुदेव दिल्ली और आसपास के सत्संगी भाई बहनों के साथ ट्रेन से पधारे। पहले से निर्धारित कार्यक्रम अनुसार गुरुदेव का आदर सत्कार किया गया। और फिर चाय नाश्ते के कुछ समय बाद मैंने गुरुदेव के पास बैठ कर पानी की समस्या के विषय में उन्हें बताया। गुरुदेव ने मेरी बात को बहुत ही ध्यान से सुना फिर आप थोड़ी देर के लिए मौन हो गये। फिर कुछ ही देर में बोले ''गुरु महाराज कृपा करेंगें, हम सब की लाज उनके हाथ में है''। अब देखिये गुरुदेव जी की अदभुत लीला को, उनकी ऐसी कृपा हुई कि तीन दिन लगातार मशीन चलती रही फिर भी पानी का सोत कम नहीं हुआ। जो कुँआ 2–3 घंटे मशीन चलने के बाद खाली हो जाया करता था, उस में लगातार पानी उपल्बध रहा और पूरे भंडारे के दौरान पानी की कोई कमी नहीं हुई। सब काम ऐसे हो रहा था कि मानों पानी की कोई समस्या कभी थी ही नहीं। आप को जानकर हैरानी होगी की आज भी उस कुऐं में भरपूर पानी है और कुँआ कभी खाली नहीं हुआ। गाँव के प्रधान जी का तो कहना है कि हमारे को तो भगवान का वरदान मिल गया। ऐसे थे हमारे गुरुदेव।

*–डा. दिनेश कुमार श्रीवास्तव (भभुआ)*

## प्रथम परिचय एवं दीक्षा ग्रहण

बात वर्ष 1977 की है। मैं गोपालगंज में अपने परिवार के साथ रह रहा था। दरअसल उन दिनों मेरे एक मित्र जिसकी मैंने काफी मदद की थी ने मुझे धोखा दिया जिससे मैं काफी आहत हुआ था और मुझे गहरा

धक्का भी लगा था। मैं पूजा पाठ जो कई वर्षो से करता आ रहा था एकदम छोड़ कर नास्तिक सा हो चुका था। वहीं गोपालगंज में मेरी पत्नी के एक सम्बन्धी लक्ष्मी जी और उनके पति श्री विनायक प्रसाद वर्मा रहते थे। वो कुछ ही दिन पहले एक सतगुरु (सरदारजी साहब) से दीक्षा लेकर लौटे थे।

कुछ समय पश्चात् (1978) में पता चला कि गुरुदेव गोररवपुर आ रहे हैं। विनायक बाबू व उनकी पत्नी उनसे मिलने जा रहे थे। पत्नी भी उनके साथ जाने व उनसे दीक्षा लेने के लिये बेचैन हो गईं। लेकिन विनायक बाबू ने बताया कि बिना पति की आज्ञा के गुरुदेव किसी महिला को दीक्षा नहीं देते। मैंने कह दिया कि आप अपने गुरुदेव को बता दें कि पत्नी की दीक्षा के लिये मेरी पूरी सहमति है। पत्नी गोररवपुर गईं और दीक्षा प्राप्त की। लौटकर मुझे बताया कि गुरुदेव का नाम डा. करतार सिंह ढींगरा है वे रामाश्रम सत्संग के अध्यक्ष एवं आचार्य हैं।

1979 अक्टूबर में रामाश्रम सत्संग का वार्षिक भंडारा सिकन्दराबाद में होने जा रहा था जिसमें भाग लेने के लिये विनायक बाबू, लक्ष्मी व पत्नी मुझे भी साथ ले जाने की योजना बना रहे थे जिसके लिये मुझे तरह-तरह के तर्क दिये जाने लगे। यहाँ तक कहा कि मैं सत्संग में न जाकर सिर्फ ठहरने के स्थान पर ही रहूँ आदि-आदि। अंत में तंग आकर मैंने हाँ कह दी, लेकिन इस शर्त के साथ कि मैं सत्संग में नहीं जाऊँगा। हम सब सिकन्दराबाद पहुँच गये और गुरुदेव से मिलने चल दिये। टहलने चलने के बहाने मुझे भी साथ ले लिया। तभी हमने देरवा कि गुरुदेव कुछ भाईयों के साथ सीढ़ियों से उतर रहे थे। वे शाम को अकसर टहलने के लिये जाया करते थे। सबने प्रणाम किया तो मैंने भी प्रणाम कर दिया। मेरी पत्नी को देरवकर बोले ''सीता बहन आप भी आई हैं'' इस पर विनायक जी ने मेरी ओर इशारा कर कहा कि ''डा. साहब भी आये हैं''। उन्होंने प्रसन्न होकर देखा और मैंने भी उनका अभिवादन किया जिसे उन्होंने स्वीकार किया। फिर वे बोले ''मैं टहल कर आता

हूं, तब आप लोग आइये''। मुझसे बोले ''डाक्टर साहब आप भी आइये'', मैं कुछ भी नहीं बोल सका।

हम लोग कुछ देर बाद फिर गुरुदेव से मिलने पहुँचे। प्रणाम करने के बाद उन्होनें हम लोगों को बैठने को कहा तथा कुशलक्षेम पूछी और वहां उपस्थित भाई बहनों से बोले कि ''आप लोग अभी कुछ देर के लिए बाहर जायें, मुझे डाक्टर साहब से कुछ बातें करनी हैं''। सबके जाने के बाद उन्होंने मुझसे कहा कि यदि मुझे कुछ पूछना हो तो पूछ लूँ। मैंने साफ कह दिया कि मुझे कुछ नहीं पूछना। इस पर वे मौन हो गये और आँरवे बंद कर लीं। कुछ समय बाद आँरवे रवोलीं और जो भी विचार एवं धारणायें मेरे मन में भगवान, देवी–देवताओं के विषय में थीं उनके बारे में विस्तार से बताने लगे। पहले तो मुझे लगा कि इस विषय में शायद मेरी पत्नी ने उन्हें बताया होगा, किन्तु मैंने पाया कि उनकी बातों से मेरे मन में जो प्रतिक्रिया होती व प्रश्न उठते उन्हें भी वे समझ जाते और उनका तुरंत ही उत्तर भी दे देते थे। तब मुझे लगा कि उनमें कोई न कोई शक्ति तो अवश्य है। ठहरने के स्थान पर वापस आने के बाद विनायक जी तथा लक्ष्मी जी ने गुरुदेव के विषय में मेरी राय पूछी। मेरे द्वारा अच्छा कहने पर दूसरे ही दिन मेरी दीक्षा हो गई।

एक बार पूज्य गुरुदेव गोपालगंज में विनायक जी के यहाँ ठहरे हुए थे। सुबह के समय टहला करते थे, एक दिन मुझे भी अपने साथ लेकर छत पर टहलने के लिये गये। टहलते समय उन्होंने मुझसे दो बातें कहीं, पहली बात ''अगर आप सही और सच्चे रास्ते पर हैं तो दुनिया की कोई ताकत आपका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती'' और दूसरी बात ''आपसे मुझे काम लेना है, जो समय आने पर बताऊँगा''। यकीन मानिये ये दोनों गुरुदेव की कही हुई बातें सच साबित हुईं।

**जीवन दान :–** बात 1996 की है। एक दिन मेरे गले में बायीं ओर दर्द होने लगा। साधारण गले का दर्द समझ कर मैंनें कुछ घरेलू इलाज

जैसे गर्म पानी से गरारे आदि करना शुरु कर दिया। किन्तु इनसे कोई आराम न मिलने पर Antibiotic medicine भी ली, तब भी कोई आराम नहीं आया। कुछ दिनों बाद मैं अपने लड़के के पास दिल्ली गया। मेरी हालत सुनकर उसने राम मनोहर लोहिया अस्पताल में मेरा परिक्षण करवाया। डाक्टर ने कुछ जाँच व Biopsy करवाने की सलाह दी। 2–3 दिन बाद रिपोर्ट आयी तो उसे देखकर हम सब स्तब्ध रह गये। रिपोर्ट से पता चला कि यह बिमारी (Non Hodgekins Lymphoma) एक प्रकार का कैन्सर है, जिससे ग्रसित रोगी 4–5 साल से ज्यादा जीवित नहीं रहता। मेरे लड़के ने एक अन्य नामी अस्पताल में दुबारा slide की जाँच करवाई। वहाँ के डाक्टर ने भी बीमारी की पुष्टि की। अब मेरी पत्नी व लड़का गंभीर हो गये। वे लोग मुझे राजीव गाँधी कैन्सर संस्थान में जाँच करवाने के लिये ले गये। वहाँ भी कुछ और जाँच जैसे Bone marrow biopsy आदि की गईं। इनके बाद डाक्टर ने अस्पताल में भर्ती होकर कुछ दिनों तक नर्सों द्वारा (I.V.) दवा चढ़ाये जाने की सलाह दी। एक डाक्टर होने के नाते मैं स्वयं इस उपचार से होने वाले कष्ट व बुरे प्रभावों के बारे में जानता था, अतः मैंने इसे करवाने से साफ इंकार कर दिया। सबने बहुत समझाने की कोशिश की पर मैं नहीं माना। मैंने अपनी पत्नी व लड़के से निवेदन किया कि वे मुझे पूज्य गुरुदेव के पास ले चलें। हारकर वे मुझे गुरुदेव के पास ले गये। उन लोगों ने गुरुदेव से भी विनती की कि वे मुझे अस्पताल में इलाज करवाने के लिये समझायें। गुरुदेव के पूछने पर मैंने कहा कि 'मैं आपकी शरण में आया हूँ, अब आप जिलायें या मारें, आपकी मर्जी'। यह सुनकर वे हल्के से हँसे तथा उठकर अपनी अलमारी से एक दवा की शीशी निकाली और उसमें से दो बूँद मुझे रिवला दी। फिर एक दवा का नाम बताकर कहा कि 'इसे आप हर सप्ताह लें'। मैं नियमित रूप से दवा लेने लगा और धीरे–धीरे अच्छा हो गया। जब कभी गले में हल्का सा भी दर्द किसी भी कारण से होता तो उनसे पूछकर एक खुराक दवा की ले लिया करता। और

उनकी कृपा से आज तक बिल्कुल ठीक हूँ। ऐसे थे हमारे गुरुदेव व उनकी कृपा। आज सोचता हूँ कि अब मैं कोई कष्ट पड़ने पर किसके पास जाऊँगा।

*–डा. मुद्रिका प्रसाद, (मुजफ्फरपुर)*

# तुम हमको नाहीं बिसारे हो

जब सवाल जन्म और मृत्यु का था और भायला जीवन और मृत्यु के बीच झूल रहा था, मांग थी बोनस को ले कर। बोनस तो हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है। जहाँ एक तरफ हम कर्मचारियों को प्रत्यक्ष रूप से लाभ है वहीं इस से सरकार और देश को भी अपार लाभ है। गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों को लाभ पहुँचेगा तो जीवन स्तर ठीक होगा, समाज में मानवता, भाईचारा, सदाचार, रख–रखाव ठीक होगा, संजीवता आयेगी, शिष्टाचार का बोल बाला होगा। प्रजातंत्र की स्थापना होगी और राम राज्य की नींव मज़बूत होंगी।

कर्मचारियों की भूख हड़ताल के कई दिन बीत चुके थे और अब भायला की हालत काफी खराब हो चुकी थी। भायला को जबरदस्ती अस्पताल में भर्ती करा दिया गया था। अस्पताल में भगदड़ का माहौल था कि भायला अब गया कि तब, हालत दिनों–दिन खराब होती जा रही थी, बचने की गुंजाईश अब कम होती जा रही थी। ऐसे में विशम्बर लाल चौमाल जी जो कि हमारे सिलसिले के ही हैं, ने सरदार जी साहब को एक पत्र लिखा और गुरुदेव को बताया कि भायला जी को पुलिस जबरदस्ती उठा लाई है और अस्पताल में भर्ती करा दिया गया है। भायला जी की हालत काफी गंभीर है। सरदारजी ने पोस्टकार्ड देखते ही अपनी दया दृष्टि डाली। सीनियर कम्पाउंडर इस्माईल जी जो कि हमारे ही सिलसिले के हैं पर नज़र डाली और वे रात्री को बारह बजे के बाद मेरे

पास आए और तवज़्ज़ो देने लगे। देखते ही देखते सारा माहौल बदलने लगा और धीरे धीरे भायला फिर से भायला हो गया। वाह रे करतार तेरी करतारी! कुछ समय बाद जब मैं दिल्ली आया तो आपने मुझे बुला कर हाल चाल पूछा और फिर कहा ''आपको जो कुछ करना हो करो! भूख ह्ड़ताल करो या फिर अनशन, पर मुझे इसकी इत्तला (सूचना) पहले मिल जानी चाहिए ताकि मैं अपना फर्ज़ अदा (इंतज़ाम) कर लूँ, क्योंकि ये शरीर अब आपका नहीं है, मेरा है और मुझे इसकी रक्षा करनी है। आप अपना फर्ज़ अदा करो और मैं अपना।''

## अभय दान

काफ़ी साल पहले की बात है, गुरुदेव ने मुझे से कहा था, ''मास्टर जी आप के इलाके में भूत प्रेत की बहुत चर्चा रहती है। आपको भी इसे झेलना पड़ेगा। ध्यान रखना, आपका कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता, सावधान रहो, मैं हर वक्त आपके साथ हूँ। ये आपके आगे टिक नहीं पायेंगे''।

रात्रि के लगभग 12 बजे होंगे, मैं तीन नम्बर गेट के पास चौक में बीचोंबीच अपनी खाट पर लेटा हुआ था कि अचानक मेन गेट की तरफ से कंकरीट की बौछार होने लगी, सरसराते हुए पत्थरों की कतारें मेरे पांव की तरफ से सिर, कानों, कन्धों और पेट के ऊपर से दायें बायें चारों तरफ से बरसने लगे, लेकिन बिना मेरे शरीर को छुए। ऐसे में मैं उठ कर ज़ोर से चिल्लाया, – ''अरे कौन है जो पत्थर मार रहा है? ठहर जा अभी देखता हूँ।'' थोड़ी दूरी पर भागचन्द चौकीदार भी उठ खड़ा हुआ, उसने लाठी उठाई और बाहर तक जा कर देखा, लेकिन कोई नहीं था, एकदम सुनसान, घोर अंधेरी रात। कुछ दूर पर कुछ महिलायें भी सो रहीं थी, मगर किसी ने कुछ नहीं देखा। मैं भी गुरुदेव को याद करते हुए सो गया।

फिर कुछ दिन बाद एक बार मैं अपनी खाट पर रात में लेटा हुआ था कि अचानक चारपाई के नीचे से कोई सींग मार रहा था। कभी इधर से सींग उठाता तो कभी उधर से दरअसल कोई मेरी खाट को पलटने की फ़िराक में था। साथ ही मुझे कुछ ऐसा लगा की ऊपर से कोई एक गंडासा लिये कह रहा था कि 'मार साले की गर्दन पर, देखता क्या है'। जैसे ही वह नीचे की तरफ होने लगा मुझ पर वार करने को, इतने में एक प्रकाश की ज्योति आती हुई दिखाई दी और वह ज्योति देख कर बोला भागो भागो, जल्दी करो, इसका पीर आ गया! वाह रे वाह पीर! क्या जलवा है तेरा। तभी मुझे गुरुदेव के वो शब्द याद आ गये जो उन्होने मुझसे कहे थे ''ये तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते, ये तुम्हारे आगे टिक नहीं सकते, मैं तुम्हारे साथ हूँ''। ये उनकी ही कृपा थी कि मैं सही सलामत था। कुछ दिनों बाद जब मैं दिल्ली आया तब गुरुदेव से मैंने पूछा कि ये भूत प्रेत कैसे बुलाए जाते हैं? और इन से काम कैसे लिया जाता है। गुरुदेव बोले ''लो ये भी कोई बड़ी बात है, फिर रूक कर मुझसे कहा, अब तुम्हारा शरीर इस काबिल नहीं है, ये बड़ा उधम मचाते हैं, अगर सामने वाला अपने काम में सफल नहीं होता तो उसके पीछे पड़ जाते हैं। तुम ये सब मेरे पर छोड़ो और बस अपना काम करते रहो, मैं तुम्हारे साथ हूँ''।

नानक कहे देख भाई भायला रंग करतार के, भायला कहे देखूँ जानूँ रंग मैं करतार दे। सर आँखों पर बिठा लिया है, सीने से लगा रखा है। अरे कोई है इस पृथ्वी पर या तीनों लोकों में जो मुझे बचा रहा है गर्म सर्द हवाओं से, सब कुछ झेल रहा है अपने ऊपर। बड़े भारी हो सरमायेदार।

*–श्री हरवंशलाल भायला, (झुंझुनू)*

*श्रद्धांजली*

# श्रीमती जोगिन्दर कौर (माता जी)

नियति की कठोरता का स्वरूप कब कैसा होगा कोई कभी जानने नहीं पाया। कुछ ही महीनों पहले परम पूज्य गुरुदेव डा. करतार सिंह जी साहब को भगवान ने अपने परमधाम बुला लिया और अब गुरुमाता की छत्रछाया भी हमसे छीन ली।

परम आदरणीया सरदारनी जोगिन्दर कौर जी जिन्हें अपने-अपने ढ़ंग से कोई माताजी, कोई भाभी जी, कोई आंटी जी और कोई बहिन कहता था, रामाश्रम सत्संग में एक ऐसा व्यकितत्व थीं जो अपनी प्यार भरी मुस्कान हर दिशा में फैलाती थीं।

आदरणीय माता जी का आगमन पूज्य गुरुदेव के परिवार तथा सत्संग में सन 1960 में (20 मार्च को) एक अत्यन्त सादगीपूर्ण विवाह के बाद हुआ। कारण- गुरुदेव का पूज्य दादा गुरुदेव के आदेशानुसार सत्संग की सेवा हेतु पुनः घर बसाना था। तब से लेकर अपनी मृत्यु पर्यन्त सरदारनी जी ने न केवल पत्नी धर्म का निर्वाह किया बल्कि एक कुशल गृहणी, एक प्यार भरी मां, एक स्नेहमयी व उत्तरदायी सासुमाँ और सम्पूर्ण सत्संग की समर्पित सेविका- सभी रूपों में अपनी असाधारण योग्यता का परिचय दिया।

भंडारा चाहे गाज़ियाबाद में हो या कहीं और सभी सत्संगी महिलायें, बहुयें, बेटियाँ उनसे मिलने को उत्सुक रहते, उनके लिये उपहार लाते और सरदारनी जी के भंडार से भी सभी को कुछ न कुछ आशीष भरे उपहार दिये जाते थे। रिश्तेदार हों या मित्र या सत्संगी हरेक के साथ सुरव-दुःरव के सभी अवसरों पर वे बहुत अच्छे ढंग से अपनेपन का परिचय देती थीं। पूज्य गुरुदेव की सेवा में तो उनका जीवन समर्पित था ही। उनकी प्रत्येक आवश्यकता की पल पल की रवबर ररवतीं और तन-मन से उसे

पूरा करती थीं। उनका जीवन हम सब के लिये प्रत्येक क्षेत्र में एक अमूल्य उदाहरण है।

सरदारनी जी को संगीत से विशेष प्रेम था और वे बड़े ही मीठे स्वर मे भाव विभोर हो कर सत्संग में हमेशा गुरुबानी व भजन गाया करती थीं। वे हारमोनियम भी बजाती थीं। दैनिक सत्संग हो या भंडारा गुरुवंदना के बाद उनके भजन से ही आरम्भ होता था और समापन भी उनके गाये भजन से ही होता था। गुरुदेव के जन्मदिन पर तो उन्हें सुहाग के जोड़े में सजकर भजन गाते हुये जिन्होनें देखा है वो ही उसका आनन्द जानते हैं। जब कभी किसी का जन्मदिन होता तो उनके आशीष भजन से सारा वातावरण सराबोर हो जाता था। पूता माता की आसीस..., करो दया मेरे सांई..., आदि कुछ एक उनके प्रिय भजन हुआ करते थे।

हम सब सत्संगी भाई बहन उनकी आत्मा की शांति के लिये प्रार्थना करते हैं और उन्हें अपनी भावभीनी श्रद्धांजली अर्पित करते हैं।

*–डा. शक्ति कुमार सक्सेना*

## भजन

तुम करो दया मेरे सांई ।। –।।
पानी परवा पीसो संत आगे, गुन गोविन्द जस गाई।। तुम...

ऐसी मति दीजे मेरे ठाकुर, सदा–सदा तुझे ध्याई।
स्वांस–स्वांस मन नाम सुमिरिये, एह बिसराम निधि पाई। तुम...

तुम्हरी कृपा ते मोह–मान छूटै, बिनस जाये भरमाई।
आनन्द रूप रख्यो सब मध्यै, जत कत पेखउ जाई।। तुम...

तुम दयाल, कृपाल कृपानिधि पतित पावन गोसाई।
कोट सुख आनन्द राज पाये, मुख ते निमख बुलाई।। तुम...

जाप ताप भगत सा पूरी, जो प्रभु के मन भाई।
नाम जपत तृष्णां सब बुझिहै, नानक त्रापत अधाई।। तुम...

# मकर संक्रान्ति पर्व का धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्व

मकर संक्रान्ति भारत का एक प्रमुख पर्व है। देश के विभिन्न प्रांतों में मकर संक्रांति पर्व को अलग–अलग नामों से जाना जाता है। तमिलनाडु में इसे पोंगल, असम में इसे माघ बिहू, पंजाब एवं हरियाणा प्रांत में लोहड़ी पर्व के रूप में मनाते हैं। उत्तर प्रदेश में इस पर्व को दान एवं खिचड़ी पर्व तथा बिहार में तिल संक्रांति एवं खिचड़ी पर्व के नाम से मनाया जाता है।

मकर संक्रांति के दिन सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण होता है, इसलिये इस पर्व को उत्तरायणी पर्व के रूप में भी जानते हैं। इस पर्व का जिक्र हमारे कई धार्मिक ग्रंथों में हुआ है जिससे इस पर्व के धार्मिक महत्व का ज्ञान होता है। धर्म ग्रंथों में सबसे आदरणीय 'गीता' में कहा गया है कि उत्तरायण के 6 महीने देवताओं का दिन है, और दक्षिणायन के 6 महीने देवताओं के लिए रात्रि है। जो व्यक्ति उत्तरायण में शरीर का त्याग करता है उसे उत्तरायण से कृष्ण के लोक में स्थान प्राप्त होता है, उसे मुक्ति मिल जाती है। जबकि, दक्षिणायन में शरीर त्यागने वाले को पुनः जन्म लेना पड़ता है।

महाभारत काल में भीष्म पितामह जिन्हें इच्छा मृत्यु का वरदान प्राप्त था, बाणों की शैय्या पर लेटे रहने के बावजूद उन्होंने दक्षिणायण में प्राण त्याग नहीं किया बल्कि सूर्य के उत्तरायण में होने तक इंतजार करते रहे। मान्यता है कि मकर संक्रान्ति के पुण्य दिन जब सूर्य उत्तरायण में प्रवेश किया तब उन्होंने अपने शरीर का त्याग किया।

मकर संक्रान्ति के विषय में एक अन्य धार्मिक कथा है कि भगवान श्री कृष्ण को पुत्र रूप में पाने के लिए यशोदा माता ने व्रत किया था। गंगावतरण की कथा भी मकर संक्रान्ति से सम्बन्धित है। माना जाता है कि मकर संक्रान्ति के दिन ही गंगा भगीरथ मुनि के पीछे–पीछे चलते

हुए सागर में जा मिली थीं। मकर संक्रान्ति के दिन गंगा का सागर में संगम होने के कारण इस दिन गंगासागर में स्नान के लिए श्रद्धालुओं की भीड़ जुटती है।

मकर शनि की राशि है। मकर संक्रान्ति के दिन सूर्य शनि की राशि में प्रवेश करता है। सूर्य देव शनि के पिता हैं। पिता अपने पुत्र से मिलने उनके घर जाता है। शनि और सूर्य दोनों ही पराक्रमी ग्रह हैं इन दोनों के शुभ फल से मनुष्य अपार सफलता प्राप्त कर सकता है। इसलिए लोग मकर संकान्ति के पावन पर्व पर सूर्य एवं शनि देव को भी प्रसन्न करते हैं।

**सौभाग्य का पर्व मकर संक्रान्ति** – सुहागन महिलाएं अपने पति की लम्बी आयु के लिए इस दिन सूर्य देव की पूजा करती हैं एवं अपने बड़ों को भेंट देकर उनसे अपने पति की लम्बी आयु का आशीर्वाद लेती हैं कि जिस प्रकार दिन बढ़ रहा है उसी प्रकार उनके पति की आयु भी बढ़े।

इन सभी धार्मिक भावनाओं एवं मान्यताओं से प्रेरित होकर लोग मकर संक्रान्ति का उत्सव मनाते हैं।

## यदि आप ....

यदि आप कुछ बनना चाहते हैं,
तो ईश्वर भक्त बनिये, देश भक्त बनिये।
यदि आप कुछ बनाना चाहते हैं,
तो अपना चरित्र बनाइये, आध्यात्म बनाइये।
यदि आप कुछ छोड़ना चाहते हैं,
तो अपनी बुरी आदतें व हर 'अति' को छोड़िये।
यदि आप कुछ करना चाहते हैं,
तो ग़रीबों व असहायों के लिये कुछ न कुछ करिये।
यदि आप लड़ना चाहते हैं,
तो मातृभूमि और मानवता के लिये लड़िये।

# अलौकिक कृति 'जपुजी'

आदि गुरु श्री गुरुग्रंथ साहब की मूलवाणी 'जपुजी' जगतगुरु श्री गुरुनानकदेवजी द्वारा जनकल्याण हेतु उच्चारित की गई अमृतमयी वाणी है। 'जपुजी' एक विशुद्ध सूत्रमयी दार्शनिक वाणी है। उसमें महत्वपूर्ण दार्शनिक तथ्यों को सुंदर अर्थपूर्ण और संक्षिप्त भाषा में काव्यात्मक ढंग से अभिव्यक्त किया है। इसमें ब्रह्मज्ञान का अलौकिक ज्ञान प्रकाश है। इसका दिव्य दर्शन मानव जीवन का चिंतन है। अतः महान गुरु की इस महान कृति की व्याख्या करना तो दूर इसे समझना भी आसान नहीं है। लेकिन जो इसमें प्रयुक्त भाषाओं को जानते हैं उनके लिए इसका चिंतन, मनन करना उदात्तकारी एवं ऊद्धर्वोमुखी है। यह एक पहली धार्मिक और रहस्यवादी रचना है और आध्यात्मिक एवं साहित्यिक क्षेत्र में इसका अत्यधिक महत्व है।

गुरु नानक जी की जन्म साखियों में इस बात का उल्लेख है कि जब वे सुल्तानपुर में रहते थे, तो वे रोजाना निकटवर्ती वैई नदी में स्नान करने के लिए जाया करते थे। जब वे 27 वर्ष के थे, तब एक दिन प्रातःकाल वे नदी में स्नान करने के लिए गए और तीन दिन तक नदी में समाधिस्थ रहे। वृत्तांत में कहा है कि इस समय गुरुजी को ईश्वर का साक्षात्कार हुआ था। उन पर ईश्वर की कृपा हुई और दैवी अनुकम्पा के प्रतीक रूप में ईश्वर ने गुरुजी को एक अमृत का प्याला प्रदान किया। वृत्तांतों में इस बात के साक्षी मौजूद हैं कि इस अलौकिक अनुभव की प्रेरणा से गुरु नानक ने मूलमंत्र का उच्चारण किया था, जिससे जपुजी साहिब का आरंभ होता है।

**हमारे गुरुदेव परमसंत डा. करतार सिंह जी का जपुजी साहब पर विशेष ध्यान था और उनका कहना था कि इसमें एक अभ्यासी के लिये जीवन का सार छुपा हुआ है। अपने अंतिम दिनों में वे अक्सर सत्संग में जपुजी साहब की कुछ आरम्भिक पंक्तियों का पाठ करवाया करते थे। कभी-कभी तो गुरुदेव स्वयं**

**ही बार बार दोहराया करते जिससे कि भाई लोग इसे कंठस्थ कर लें।** सत्संगियों के लाभार्थ वे पक्तियां अर्थ सहित नीचे दी जा रही हैं।

जपुजी का प्रारंभिक शब्द एक ओमकारी बीज मंत्र है जैसे उपनिषदों और गीता में ओउ्म शब्द बीज मंत्र है।

## 'एक ओंकार सतिनामु, करता पुरखु निरभउ, निरवैरु, अकाल मूरति, अजूनी, सैभं गुर प्रसादि'

अर्थः–

**एक ओंकार –** अकाल पुरख (परमात्मा) एक है। उसके जैसा कोई और नहीं है। वो सब में रस व्यापक है। हर जगह मौजूद है।

**सतनाम –** अकाल पुरख का नाम सबसे सच्चा है। ये नाम सदा अटल है, हमेशा रहने वाला है।

**करता पुरख –** वो सब कुछ बनाने वाला है और वो ही सब कुछ करता है। वो सब कुछ बनाके उसमें रच–बस गया है।

**निरभउ –** अकाल पुरख को किसी से कोई डर नहीं है।

**निरवैर –** अकाल पुरख का किसी से कोई बैर (दुश्मनी) नहीं है।

**अकाल मूरत –** प्रभु की शक्ल काल रहित है। उन पर समय का प्रभाव नहीं पड़ता। बचपन, जवानी, बुढ़ापा मौत उसको नहीं आती। उसका कोई आकार कोई मूरत नहीं है।

**अजूनी** – वो जूनी (योनियों) में नहीं पड़ता। वो ना तो पैदा होता है ना मरता है।

**स्वैभं( स्वयंभू)** – उसको किसी ने न तो जन्म दिया है, न बनाया है वो खुद प्रकट हुआ है।

**गुरप्रसाद –** गुरु की कृपा से परमात्मा हृदय में बसता है। गुरु की कृपा से अकाल पुरख की समझ इन्सान को होती है।

**आदि सचु जुगादि सचु।।**
**है भी सचु।। नानक होसी भी सचु।। १।।**

**अर्थः–** ऐ नानक! अकाल पुरुष आदि काल से अस्तित्व वाला है, युगों के आरम्भ काल से अस्तित्व वाला है। इस काल में भी विद्यमान है और आगामी काल में भी अस्तित्व युक्त रहेगा।

**सोचै सोचि न होवई जे सोची लरव वार।।**
**चुपै चुप न होवई जे लाइ रहा लिवतार।।**

**अर्थः–** यदि मैं लारव बार भी (स्नानादि द्वारा शारीरिक) शुचि ररवूं, (तो भी इस प्रकार) शुचि ररवने से मेरे (मन में) पवित्रता नहीं रह सकती। यदि मैं शारीरिक अरवण्ड–समाधि लगाए ररवूँ (तो भी इस प्रकार) मौन रहने से मन शान्त नहीं रह सकता।

**भुरिवआ भुरव न उतरी, जे बंना पुरिआ भार।।**
**सहस सिआणपा लरव होहि त इक न चलै नालि।।**

**अर्थः–** यदि मैं सब भुवनों के पदार्थों के ढेर भी इकठ्ठे कर लूं, तो भी तृष्णा के आधीन रहने से मेरी तृष्णा मिट नहीं सकती। यदि (मेरी बुद्धि में) हज़ारों और लारवों चतुराईयां (प्रज्ञावाद) भी विद्यमान हों (तो उन में से) एक चतुराई भी मेरे संग प्रलोक में नहीं जायेगी।

**किव सचिआरा होईऐ, किव कूड़ै तुटै पालि।।**
**हुकमि रजाई चलणा, नानक लिरिवआ नालि।।**

**अर्थः–** परमात्मा से जीव के भेद को मिटाने का एक ही उपाय है कि जीव उस की रज़ा (नियंत्रण) में रहें, यह सिद्धान्त अनादि–काल से ही परमात्मा ने जीवों के लिए ज़रूरी समझा है। कोई पुत्र पिता की आज्ञा में रहे तो उसे दुलार प्राप्त होता है और यदि न रहे तो परस्पर भेद बढ़ता ही जाता है।

# सन्तों का होली महोत्सव

प्रत्येक ऋतु का प्रकृति की सारी वस्तुओं पर प्रभाव होता है। वह प्रभाव वनस्पति, कीड़े–मकोड़ों, जानवर और पक्षियों तक ही सीमित नहीं होता बल्कि उसका प्रभाव मनुष्य शरीर पर भी प्रत्यक्ष देखवने में आता है। जब वसंत ऋतु आती है तो तमाम वनस्पति फूली नहीं समाती। मनुष्य भी उसके रस से रवाली नहीं रहता।

होली के दिनों में अंग–अंग में नया रवून और नया जोश पैदा होता है। उन दिनों जन–जन के हृदय में प्रेम, हास–परिहास और हर्षोल्लास का प्रादुर्भाव हो जाता है। फागुन की होली की बयार उसमें प्रेम की लाली का रंग भर देती है। सब बच्च–बड़े, स्त्री–पुरुष एक दूसरे पर प्रेम विभोर हो रंग डालते और खुशियाँ मनाते हैं। पुरानी शत्रुता या द्वेष को भूलकर सब लोग बड़े प्रेम से गले मिलते हैं, और सब एक ही रंग में डूबकर होली के लोक गीत गाते हैं। ढोल, मजीरे और बीन बाजे बजा कर उत्सव मनाते हैं। ऊँच–नीच, बैर आदि को भूलकर सब समान भाव से एक दूसरे से गले मिलते हैं, और प्रेम के सरोवर में डूब जाते हैं। हिन्दु समाज के सभी लोग इस पर्व को मिलन, प्रेम, आनंन्द का पर्व, और खुशियों का त्योहार मानते हैं। यह होली का लौकिक पक्ष है।

होली आध्यात्मिक रूप में संतों द्वारा भी मनायी जाती है। जो होली मनुष्य को परमार्थ के पथ पर अग्रसर करती है, वह संतों की होली है। इस होली का जोश ऊपर की ओर ले जाने वाला होता है। वह जोश प्रभु के चरणों की भक्ति–रस से पैदा होता है और उसमें मनुष्य के तन–मन और सुरत भीगे रहते हैं। उसी भक्ति रस में पगी हुई सुरत के द्वारा सत्पुरुष से नाता जुड़ जाता है। वह सुरत मालिक के देश में ही मँडराती रहती है और नीचे नहीं उतरती।

अपने स्वामी सत्पुरुष दयाल के चरणों को दृढ़तापूर्वक पकड़ कर जब सुरत की धार निकलती है और मालिक के चरणों की ओर वेग से दौड़ती है तो उसी आनंद के महासिन्धु में डूबकर विलीन हो जाती है।

कबीरदास जी कहते हैंः–

**''मैं तो वा दिन फाग मचै हौं, जा दिन पिया मोरे द्वारे ऐहैं।**
**रंग दशा रंगरेजवा, वही सुरत चुनरिया रंगैहैं।।''**

ऐसी दशा में इस काल देश के तीनों गुण जो विकार उत्पन्न करते हैं, वे धुल जाते हैं और उनका रूप बदल जाता है। अहंकार से जो ममता उत्पन्न होती है, वह गायब हो जाती है। जैसे गुलाल के कण होली के दिनों में वायुमंडल में उड़ते दिखवाई देते हैं उसी प्रकार अहंकार तिनके–तिनके होकर धूल की तरह उड़ जाता है। सुरत में प्रेम रस भर जाता है। वह अपनी झोली प्रेम रूपी केसर और पलाश से भर लेती है और उस पर वही रंग छा जाता है। त्रिकुटी के स्थान पर लाल सूर्य है। उसकी लाली का प्रतिबिम्ब इस देश के माणिक और लाल में हैं जो उसी के प्रभाव से सुहावने बन जाते हैं। अपने इस पद में मीराबाई ज्ञान की कितनी गम्भीर बातें कह रही हैंः–

''फागुन के दिन चार....
फागुन के दिन चार रे, होली खेल मना रे।
बिन करताल परवावज बाजै, अनहद की झनकार रे,
बिन सुर राग छतीसूँ गावै, रोम रोम रणकार रे।
सील संतोख की केसर घोली, प्रेम प्रीत पिचकार रे,
उड़त गुलाल लाल भयो अम्बर, बरसत रंग अपार रे।
घट के सब पट खोल दिये हैं, लोक लाज तजि डार रे,
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरण कँवल बलिहार रे।''

अहंकार और मोह ममता के चूर हो जाने पर आत्मा जिस विपत्ति में यहाँ फँसी हुई थी उससे निकल जाती है। यहाँ आत्मा बिना पति के है, अर्थात् अपने सच्चे सत्पुरुष दयाल के चरणों से दूर हो रही है। जब उनके चरणों की भक्ति के रस में भीग कर सराबोर हो जायेगी और मालिक के चरणों में जा लिपटेगी तब माया से छुटकारा हो जायेगा और पति परमात्मा से मिलन हो जायेगा।

मनुष्य के अंतर में जो उमंग और जोश की दशा उत्पन्न हो रही है उसको शरीर द्वारा व्यक्त करना ही नाचना है। गाना मनुष्य की आंतरिक भावना को राग के उतार चढ़ाव से प्रकट करता है। विरह की तीव्रता के भाव को सरगम आदि के अनुसार गाता हुआ स्वरों के आरोह अवरोह के साथ गाने की लोच को गायक अंतर की भावना से ओतप्रोत करके तन बदन से उसमें लवलीन हो जाता है। उसको अपनी सुधबुध नहीं रहती। यदि मालिक के चरणों की विरह भावना इस सीमा तक पहुँच गयी हो तो माया नटनी का छल–बल पेश नहीं आता और न उसकी कोई उक्ति काम करती है। तीनों लोकों की रचना में सृष्टि की जो चहल–पहल दिरवाई देती है उसको नृत्य के रूप में भगवान शंकर ने पहले ही कर दिरवाया था। तभी वे नटराज कहलाये। शिव भगवान का नृत्य सदा होता रहता है, जो इन साधारण आँरवों से दिरवाई नहीं देता है। जब अंदर के चक्षु रवुलेंगे तब ही इसे देरव सकेगा। संतों ने अंदर के चक्षु को शिव नेत्र का नाम दिया है। यहाँ से जब ऊपर को चढ़ेगा तब सुरत और शब्द का नाच गाना देरवेगा और सुनेगा। त्रिकुटी के स्थान पर दीपक राग सुनकर सुरत अपने घर का उजाला करती है और प्रेम का दीपक जलाकर सुन्न में प्रवेश होकर मल्हार राग सुनती है, तो सांसारिक लगाव समाप्त हो जाता है, और न कोई वस्तु उसे ललचा सकती है, न भ्रमित कर सकती है।

जब मनुष्य के अंतर में दैवी आलोक प्रकाशित होगा उसमें मालिक के अनुरूप रूप की झलक दिरवाई देगी और मनोहर शब्द की भनक कानों में पड़ेगी तो इस संसार के तुच्छ रसों की ओर वह देरवेगा भी नहीं। पहले विहाग गाकर और प्रेम दीपक जलाकर असली मल्हार राग दशम द्वार में सुनेगा। दरिया साहब ने कहा हैः–

**''होरी सद समाज सन्तन गाया।**
**बाजा उमंग झाल झनकारा, अनहद धुन गहराइया''॥**

वहाँ प्रेम की वर्षा हो रही है, चारों ओर अमृत बरस रहा है और सब सुरतों को सराबोर और मस्त कर रहा है। यह स्थिति बहुत ऊँची है और तभी नसीब होती है जब सतगुरु की कृपा होती है। गुलाल साहिब

भी भेद की बात कहते हैं :–

**''सतगुरु संग होरी रवेलो, अनहद तूर बजाई।**
**काया नगर में होली रवेलो, प्रेम की परल धमारी।**
**पॉंच पचीस मिलि चाचरि गावहिं, प्रभु जी की बलिहारी।**

यदि इस जन्म में ही समय रहते गुरुदेव का आश्रय लेकर इस आत्मा रूपी स्त्री का परमात्मा रूपी पति से मिलन नहीं हुआ तो जन्म व्यर्थ चला जायेगा। इसी आध्यात्मिक रंग की होली के प्रति अनेक सिद्ध गुरु और सूफ़ी संत इशारा करते हैं :–

**''होली रवेलो रंग भरी, सब सरिवयन संग लाई।**
**फागुन आयो मास आनंद, जो रवेलि लेहु बनवारी।**
**ऐसा समय बहुरि नहिं पैहो, जेहि जनम जुआ हारी''।**

इसी प्रकार गुरु चरण दास जी कहते हैं:–

**''मेरे सतगुरु रवेलत नित वसंत,**
**जाकी महिमा गावत साध संत''।**

और उधर सहजोबाई जी भी मानव को चेता रही हैं :–

**''सो वसंत नहीं बार बार, दे पाई मानुष देह सार''।**

साधक को चाहिये कि काल से अपने आपको बचाकर मालिक के चरणों में दीनता और प्रेम पूर्वक इस तरह लगाये कि दिन–रात उन्हीं के चरणों में लवलीन रहें। और गुरु के चरणों का सहारा पकड़ कर उनके चरणों में लगलिपट कर संतों की होली का आनंद लूटें।

संतों की होली का आनंद उन्हीं विरले भाग्यशाली साधकों को, जिन पर गुरुदेव की विशेष कृपा होती है, प्राप्त होता है।

*प्रेरक प्रसंग*

# अन्त मति सो गति

मृत्यु के समय मनुष्य सबसे अन्त में जो विचार करता है, जिस का चिन्तन करता है, उसका अगला जन्म उसी प्रकार का होता है।

बहुत समय पहले की घटना है कि श्री भरत नाम के एक राजा थे। वानप्रस्थ समय आने पर वे राज्य, कुटुम्ब व गृह का त्याग करके वन चले गये और निष्ठापूर्वक भजन में लग गये।

संयोग की बात है कि एक दिन भरत जी नदी के किनारे संध्या कर रहे थे, उसी समय एक गर्भवती हिरणी वहाँ पानी पीने आयी। वह पानी पी ही रही थी कि कही पास से सिंह गर्जना सुन भय के मारे भाग रवड़ी हुई। भय और वेग से भागने के कारण पेट का बच्चा बाहर आ गया और पानी में बहने लगा। हिरणी तो मर गई और बच्चा भी मरणासन्न हो गया। भरत जी को दया आ गई, उन्होंने बच्चे को पानी से बाहर निकाल लिया। वे बड़े स्नेह से उसका लालन–पालन करने लगे। ऐसा करने से उन्हें बच्चे से मोह हो गया। जो सबका मोह त्याग करके आये थे वे उस बच्चे के मोह में फँस गये।

जब भरत जी के मरने का समय आया तो वह बच्चा भी उनके पास उदास बैठा था। उसी को देखते हुए और चिन्ता करते हुए उन्होंने प्राण त्याग दिये। अतः दूसरे जन्म में उन्हें मृग बनना पड़ा।

भजन बंदगी बेकार नहीं जाती। अतः मृग शरीर में भी भरत जी को अपने पूर्वजन्म की याद थी इसलिये वे सावधान हो गये थे कि फिर कहीं मोह में न पड़ जायें।

इस कथा का आशय यह है कि राजर्षि भरत जैसे को भी मोह ने न छोड़ा। इसलिये दया करो, प्रेम करो, पर आसक्ति मत करो, किसी से मोह मत करो, ममता के बंधन में अपने आपको मत बाँधो।

या कुन्देन्दु तुषार हार धवला, या शुभ्र वस्त्रान्विता।
या वीणा वर दंड मुडितकरा, या श्वेत पद्मासना।।
या ब्रह्मा अच्युत शंकर प्रभ्रतिभिः, देवै सदा वंदिता।
सा मां पातु सरस्वती भगवती, निःश्येश जाड्सापहा।।

मुद्रक, प्रकाशक व संपादक : डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

मुद्रण : अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, बी-66, सैक्टर-6, नौएडा-201301